विधिरुवाच

ममेष्टमिदमेवेह भद्रं जातं सुलोचने। मुखानि मम चत्वारि प्रियस्थानं तवेरितम्॥४४॥
तव प्रियो हि भगवान् हृदि मे वर्त्तते हरिः। भव त्वं कविताशक्तिः कवीनां वदनेषु ह॥४५॥
ते प्रकुर्वन्तु शास्त्राणि धर्मः सञ्चरतां ततः। अधिष्ठात्री देवता च पतिर्नारायणस्तव।
शास्त्राणामपि सर्वेषां विश्वात्मा विश्वभावनः॥४६॥

विधाता ब्रह्मा कहते हैं—"हे सुलोचने! मेरा भी यही मत है। मेरे चारमुख ही तुम्हारे निवास स्थान हों। मेरे हृदय में जो भगवान् हरि विराजित हैं, वे ही तुम्हारे पति हो। अब तुम कवित्व शक्ति रूपेण कविगण के मुख में निवास करो। वे विविध शास्त्रों की रचना करें। धर्म का प्रवर्त्तन हो। विश्वात्मा विश्वभावन तुम्हारे पति भगवान् नारायण समस्त शास्त्रों के अधिष्ठातृ देवता होंगे।।४४-४६।।

सरस्वत्युवाच

कथमेकास्म्यनेकेषां कवीनां कवितात्मिका। भवेयं नैव ते युक्तं यद्युक्तं तत्वदस्व मे॥४७॥

सरस्वती कहती हैं—यह ब्रह्मन्! मैं अकेली किस प्रकार से समस्त कविगण की कवि शक्ति हो सकूंगी? यह असंगत लग रहा है। जो संगत हो, वह कहें।।४७।।

विधिरुवाच

कृत्वा पर्यटनं देवि त्रिलोक्यां योग्यमुत्तमम्।
पश्य यत्र शुभा शक्तिः कविता त्वं भविष्यसि॥४८॥
अहञ्च वर्णनीयानां वर्णनीयमनुत्तमम्। विष्णोरादिचरित्रं हि सर्वधर्मनिदर्शनम्।
भविष्यत् कल्पयिष्यामि यत् त्वं तत्र वदिष्यसि॥४९॥
कवेस्तस्यैव कृपया कवयोऽन्येऽपि भाविनः॥५०॥

ब्रह्मा कहते हैं—हे देवी! तुम स्वयं त्रैलोक्य का भ्रमण करके उपयुक्त व्यक्ति को खोज लेना, जिसके मुखमण्डल में तुम कवित्वशक्तिरूपा निवास कर सको। साथ ही मैं भी समस्त वर्ण्य विषयों में अग्रगण्य, निखिल धर्म के निदर्शनरूप अनुपम भविष्य में घटित होने वाले विष्णु चरित्र की जब कल्पना करूंगा, तब तुम भी उसे श्रवण करना। तुम जिसका आश्रय लोगी उसी आदिकवि की कृपाबल से अन्य लोग भी कवि कहे जायेंगे।।४८-५०।।

देव्युवाच

इत्युक्ता सा वचो देवी ब्रह्मणो मुखवासिनी। चचार जगतीमध्येऽन्वेषयन्ती स्वमीप्सितम्॥५१॥
सुरादीन् सुरलोकेषु नागादीन् विवरादिषु।
सर्वं सत्ययुगं कालं यापयामास हे सखि॥५२॥
ततस्त्रेतायुगस्यादौ पृथिव्यां भारते तदा। ददर्श मुनिमत्युग्रतपोज्ज्वलिततेजसम्॥५३॥
तमसायां नाम नद्यां स्नात्वा सन्तर्प्य वै पितॄन्। चरन्तं शिष्यसहितं वनशोभाकुतुहलात्॥५४॥

स्वर्णप्रभजटाभारशिरसं ताम्ररोचिषम्।
कुशहस्तं स्मितास्याब्जं व्याघ्रचर्म्माम्बरं मुनिम्।
उत्तुङ्गवक्षसं नाभिगाम्भीर्य्यशोभिमध्यकम्।
आजानुबाहुं सन्मत्तगजखेलगतिं कविम्॥
आगच्छद्भिश्च गच्छद्भिर्मुनिभिः प्रणतं सदा।
वाल्मीकिं विलसत्तत्त्वज्ञानं शोकादिवर्जितम्॥५५॥५६॥५७॥

देवी कहती हैं—ब्रह्मा का यह वाक्य सुनकर ब्रह्ममुखनिवासिनी देवी सरस्वती ने अपने ईप्सित व्यक्ति का अन्वेषण करने हेतु समस्त विश्वमण्डल का पर्यटन प्रारम्भ किया। हे सखियों! उन्होंने सप्त पातालपुर तथा सप्त देवपुर का अन्वेषण करने में समस्त सत्ययुग व्यतीत कर दिया। तब त्रेतायुग के प्रारम्भ में भारतवर्ष का पर्यटन करते हुए देखा कि तेजः से दीप्त महर्षि वाल्मीकि शिष्यगण से घिरे तमसानदी में स्नानोपरान्त देवतर्पण समापन करके वनशोभादर्शन से विस्मय विमुग्ध होकर विभिन्न पादपों से शोभित तमसा तीरवर्त्ती वन में विचरणशील हैं। उनके मस्तक पर स्वर्णप्रभ जटाजाल हैं। हाथ में कुश तथा कमर में व्याघ्रचर्म है। उनकी शरीरकान्ति ताम्रवर्ण है। मुख स्मित हास्ययुक्त हैं। वक्षःस्थल उन्नत तथा प्रशस्त है। नाभि-गंभीर (गहरी) है। बाहुद्वय घुटने तक लम्बाई वाले हैं तथा गति सम्वर्त्त नामक हाथी के समान है। सभी मुनिगण वहां आ-जा रहे हैं। सभी उनको प्रणाम कर रहे हैं। वे वाल्मीकि मुनि विमलसत्व तथा ज्ञानयुक्त हैं तथा शोकादि से रहित हैं।।५१-५७।।

विचरंस्तमसातीरे वने बहुलपादपे। वाल्मीकिस्तत्र ददृशे पक्षिणं व्याधमारितम्।
पक्षिणीं रुदतीं शब्दैः करुणैः सविलापनैः॥५८॥
तत् श्रुत्वा मुनिशार्दूलः शोकाविष्टो बभूव ह॥५९॥
शोकावेशो मुनेस्तस्य नोपयुक्तः कथञ्चन। शोकादिर्यस्य वै ज्ञानं महर्षेर्नावगाहते॥६०॥
अद्भुतस्तस्य वै शोक इति शिष्याश्च मेनिरे॥६१॥

वे इस प्रकार अनेक वृक्षों से युक्त तमसा तीरस्थ वन में विचरण कर रहे थे। वहां तभी उन्होंने पक्षी को व्याध द्वारा हत देखा। उसकी मादा उच्च तथा करुण स्वर से रो रही थी। उस रुदन स्वर को सुनकर वे मुनिशार्दूल शोक से सन्तप्त हो उठे। इस उच्चस्तर के अन्तःकरण में ऐसा शोकसंचार होना असंगत हैं। इन महर्षि का हृदय कभी भी शोकावेग ग्रस्त नहीं हुआ था। आज वे इस प्रकार क्यों शोकाक्रान्त हो गये। ऐसी विवेचना से उनके शिष्यगण आश्चर्य चकित थे।।५८-६१।।

आकाशप्रभवा देवी तं दृष्ट्वा शोकसंयुतम्। न शेके शोकमोहादेरयोग्यं तपसां निधिम्॥६२॥
कविताशक्तिरूपा च विद्यारूपा सरस्वती। तस्य शोकापनोदाय महर्षेर्मुखमाययौ॥६३॥
यदैव सा वचोदेवी वाल्मीकेर्मुखमारुहत्। तदैव स च वाल्मीकिर्व्याधं वक्ति दयान्वितः॥६४॥
मा निषाद प्रतिष्ठान्त्वमिदं पादं तदादिमम्। द्वितीयपादं पद्यस्य अगमः शाश्वतीः समाः॥६५॥
यत् क्रौञ्चमिथुनादेकमिति पादं तृतीयकम्। चतुर्थं तन्मुखाज्जातमवधीः काममोहितः॥६६॥
एवं पादाश्च चत्वारः श्लोक इत्येव कथ्यते॥६७॥

तब आकाश प्रभवा देवी सरस्वती पहले मोहादि से असम्पृक्त रहे इन तपोनिधि को इस स्थिति में देखकर उनकी शोकशान्ति हेतु कवित्वशक्तिरूपेण उनके मुख में प्रविष्ट हो गयीं। इनके प्रवेश करते ही महर्षि ने दयार्द्र होकर व्याध से कहा—"हे निषाद! तुमने काममोहित पक्षी के जोड़े में से एक की हत्या की है, अनन्त काल पर्यन्त तुमको शाश्वती शान्ति नहीं मिलेगी।" यह चार पद है, अतः श्लोक कहा गया। इस श्लोक के ४ पाद (चरण) हैं। प्रथम हैं "मा निषाद प्रतिष्ठान्त्व"। द्वितीय पाद हैं "अगमः शाश्वती समाः", तृतीय पाद है "यत् क्रौञ्चमिथुनादेक"। चतुर्थ पाद है "मवधीः काम मोहितः"।।६२-६७।।

यदा तु निर्म्मला देवी वाल्मीकेर्मुखमागता। जयध्वनिस्तदा भूयान् बभूव भुवनत्रये॥६८॥
श्रुत्वा श्लोकमिमं विप्रा जगुः परमयत्नतः। पक्षिशोकं परित्यज्य श्लोकमेनं मुनिर्जगौ॥६९॥
ततो ब्रह्मा समागत्य वाल्मीकिमिदमब्रवीत्। महर्षे ननु वल्मीके भगवन् भवतो मुने॥७०॥
अधितष्ठौ स्वयं देवी वाणी काव्यस्वरूपिणी। एतदर्थेऽवतारस्ते मया सम्पादितः पुरा॥७१॥
यत् त्वं वेदार्थवक्ता स्याः काव्यरूपेण सर्व्वशः। अहं सृष्टिकरो ब्रह्मा तत्र लीलाकरो हरिः॥७२॥
तद्वर्णनस्य कर्त्ता त्वं सृष्टिरक्षाकरो भव। लोकानां धर्म्मरूपैव विष्णोर्लीला मलापहा।
त्वया सा वर्णिता लोके परो धर्म्मः स्थिरो भवेत्॥७३॥

तब त्रिभुवन में सर्वत्र जयध्वनि होने लगी। विप्रगण यत्नतः इस श्लोक को पढ़ने लगे। मुनि ने पक्षी शोक का त्याग करके जब इस चारों चरण वाले श्लोक का उच्चारण किया, तभी भगवान् ब्रह्मा वहां आ गये। उन्होंने कहा "हे महर्षि! अब से कवित्वशक्तिरूपा देवी सरस्वती (वाणी), स्वयं तुम्हारे कण्ठ में अधिष्ठित रहेंगी। अब तुम काव्यमय रूप से वेदार्थ का प्रकाशन करो। मैंने पूर्व में इसीलिये तुमको भूतल पर भेजा था। हे मुनिवर! मैं सृष्टिकर्त्ता ब्रह्मा हूं। भगवान् हरि इस सृष्टि में लीला करते रहते हैं। अतः तुम नारायण देव की लीला का वर्णन करके सृष्टि की रक्षा करो। प्रभु हरि की लीला सर्वपापहारिणी है। तुम उन लीलामय की लीला का गायन करो। इससे प्राणीगण का धर्म स्थापित होगा।।६८-७३।।

मा चिन्तां कुरु वाल्मीके श्लोकरूपा सरस्वती।
त्वन्मुखे निर्म्मला जाता कविता ब्रह्मरूपिणी॥७४॥
चतुर्व्वर्गफलप्राप्तिः काव्यादेवोपजायते। महतः पूर्व्वसंस्कारात् काव्यशक्तिर्नृणां भवेत्।
सा चेन्नीचेऽपि कविता नावमान्या कदाचन॥७५॥
अपुण्यो यदि वार्थः स्यात् काव्यबद्धो भवेद् यदि।
तदापि पुण्यदः स स्यात् किं पुनः स्यात् सदर्थकः॥७६॥
श्लोक एको भवेत् काव्यं महाकाव्यं तदुच्चयः।
अत्र सर्गाश्च कर्त्तव्याः स्वल्पाः स्वल्पाः पृथक् पृथक्॥७७॥
नारदस्योपदेशाद्धि यमर्थं ज्ञातवानसि। तं वर्णय महाभाग स च सर्व्वार्थसञ्चयः॥७८॥

हे वाल्मीकि! चिन्ता न करो। कविता ब्रह्मरूपा भगवती वाणी तुम्हारे मुखमण्डल से श्लोकरूपा आविर्भूत हैं। एकमात्र काव्य ही चतुर्वर्ग फल प्राप्ति का निदान है। जो महात्मा मानव है। उनमें पूर्व संस्कार से ही कवित्वशक्ति

का उदय होता है। नीचमुख से प्रकाशित होने पर भी कविता की अवमानना न करें। काव्य असद् अर्थ वाला होकर भी पुण्यप्रद हैं। तब यदि सदर्थ युक्त काव्य रचना हो, तब तो कहना ही क्या! श्लोक ही काव्य है। तुम विपुल श्लोक वाली विष्णुलीला की रचना करो। वह महाकाव्य होगा। तुम इस काव्य को पृथक्-पृथक् सर्ग में विभक्त करना। मुनि नारद ने तुमसे जिस हरिलीला का वर्णन किया था, उसी का वर्णन करना। हे महाभाग! इसी से सवार्थ सिद्धि होगी।।७४-७८।।

कृते त्वया महाकाव्ये भाव्यर्थे रामचेष्टिते। लोकेष्वनुचरिष्यन्ति कवयोऽन्ये सदुक्तयः॥७९॥
त्वञ्च त्रिकालवृत्तिज्ञः सत्यवादी प्रतिष्ठितः। नाहं त्वत्तः पृथग्भूतः कविरन्यः प्रजापतिः॥८०॥
कविर्ब्रह्मा कविर्विष्णुः कविरेव स्वयं शिवः। कविर्व्वै धर्म्मवक्ता च कविः सर्व्वरसैकवित्॥८१॥
न कवेर्वर्णनं मिथ्या कविः सृष्टिकरः परः। सर्व्वोपर्य्येव पश्यन्ति कवयोऽन्ये न चैव हि॥८२॥

जब तुम भविष्य में घटित होने वाली रामलीला का प्रणयन महाकाव्यरूपेण करोगे, तब जगत् के अन्य कवि भी उसका अनुवर्त्तन करेंगे। तुमको भूत-भविष्य-वर्तमान, सभी का ज्ञान है तथा तुम सत्यवक्ता एवं प्रतिष्ठित ऋषि हो। मैं तुमसे अलग नहीं हूं। कवि तो दूसरा प्रजापति ही है। कवि ही ब्रह्मा, विष्णु तथा स्वयं शिव है। जगत् में कवि ही धर्मवक्ता तथा सभी रसों का ज्ञाता होता है। कविवर्णित विषय कभी भी मिथ्या नहीं होते। कवि ही दूसरा सृष्टिकर्त्ता है। कवि ही सर्वापेक्षा सूक्ष्मदर्शन करता है। ऐसा और कोई नहीं कर सकता।।७९-८२।।

कवीनां वशगा (देवा इन्द्रोपेन्द्रयमादयः। कवीनां वशगा) मर्त्त्याः कवयो देवगोचराः॥८३॥

किम्बहुना इन्द्र-उपेन्द्र-यम आदि सभी देवता तथा समस्त वर्ण वाले कवियों के वश में होते हैं। कविगण समस्त देवताओं का अवलोकन करते हैं।।८३।।

त्वं तु रामचरित्राणि मुने भावीनि वर्णय। तत्तु रामायणं नाम महाकाव्यं भविष्यति॥८४॥
वर्णयिष्यसि यद्यत् त्वं तत्तु विष्णुः करिष्यति।
विष्णोः कीर्त्तौ भवत्काव्यं स्थास्यत्याचन्द्रतारकम्॥८५॥
श्रीरामस्य परा मूर्त्तिः काव्यं रामायणं तव। शृणु तत्कवचं येन कर्त्ता रामायणं भवान्॥८६॥

हे मुनि! तुम जिस भावी रामचरित्र का वर्णन करोगे, वह रामायण नाम से प्रसिद्ध होगा। भगवान् विष्णु उसी प्रकार से लीला करेंगे, जिस प्रकार से तुम रामायण महाकाव्य में लीला का वर्णन करोगे। जब तक आकाश में चन्द्रमा तथा तारकगण दीप्तिमान् परिलक्षित होते रहेंगे, तब तक तुम्हारे द्वारा रचित रामायण से विश्वमण्डल में रामरूपी विष्णु के गुणगण की घोषणा होती रहेगी। तुम्हारे द्वारा प्रणीत रामायण महाकाव्य भगवान् रामचन्द्र की दिव्यमूर्त्ति रूप होगा। अब रामायण कवच सुनो।।८४-८६।।

ॐ नमोऽष्टादशतत्त्वरूपाय रामायणाय महामन्त्रस्वरूपाय मा निषादेति मूलं शिरोऽवतु अणुक्रमणिकावीजं मुखमवतु ऋष्यशृङ्गोपाख्यानमृषिर्जिह्वामवतु जानकीलाभोऽनुष्टुप्च्छन्दोऽवतु गलं केकय्याज्ञा देवता हृदयमवतु सीतालक्ष्मणानुगमनश्रीरामहर्षाः प्रमाणं जठरमवतु भगवद्भक्तिः शक्तिरवतु मे मध्यं शक्तिमान् धर्म्मो मुनीनां पालनं ममोरू रक्षतु मारीचवचनं प्रतिपालनमवतु पादौ सुग्रीवमैत्रमर्थोऽवतु स्तनौ निर्णयो हनूमच्चेष्टावतु बाहू

कर्त्ता सम्पातिपक्षोद्गमोऽवतु स्कन्धौ प्रयोजनं विभीषणराज्यं ग्रीवां ममावतु रावणबधः स्वरूपमवतु कर्णौ सीतोद्धारोलक्षणमवतु नासिके अवगम्य ममोघस्तरोऽवतु जीवात्मानं नयः काललक्ष्मणसम्बादोऽवतु नाभिं आचरणीयं श्रीरामादिधर्म्मं सर्व्वाङ्गं ममावतु इति रामायणकवचं रामायणवाचकाः पठेयुस्त्वं चेदं जप्त्वा रामायणं कुरु सप्तकाण्डं।

देव्युवाच

एवमुक्त्वा मुनिं ब्रह्मा ययौ स्वर्लोकमुत्तमं।
वाल्मीकिः कविताशक्तिं प्राप्य निर्वृतिमाप ह।।८७।।

।।इति बृहद्धर्मपुराणे रामायणोत्पत्तिः पञ्चविंशतितमोऽध्यायः।।

मैं १८ तत्वरूप महामन्त्रात्मक रामायण को प्रणाम करता हूं। "हे निषाद! अनन्त काल तुम्हारी गति नहीं होगी।" यह मूल मेरे शिर की रक्षा करे। अनुक्रमणिका बीजं मुखमण्डल की, ऋष्यशृंग उपाख्यानरूप ऋषि रसना की, अनुष्टुपछन्दः गले की, कैकेयी आदेशरूप देवता हृदय की, सीता-लक्ष्मण अनुगमन तथा श्रीराम चन्द्र का हर्षरूप प्रमाण जठर की, (भक्ति बल से शक्ति उद्भूत होती है), यह मंत्र मेरे शरीर के मध्यभाग की, मुनिगणपालन ही शक्तिमान् धर्म है—यह मंत्र उरुद्वय की, मारीच वाक्य प्रतिपालन चरणयुग्म की, सुग्रीव के साथ मैत्री स्तनद्वय की, हनुमत्कार्य दोनों भुजा की, सम्पाति के पंख उगने वाली वार्त्ता स्कन्धों की, विभीषण को राजप्रदान रूप प्रयोजन ग्रीवा की, रावणवध विवरण कर्णद्वय की, सीतादेवी का उद्धार नासिका की, लयकाल में लक्ष्मण-काल संवाद नाभि की, श्रीरामादि धर्म सर्वदेह की रक्षा करें। जो रामायण पाठ करें वे पहले इस रामायण कवच को अवश्य पढ़ें। तुम भी इस कवच का जप करके सात काण्ड वाली रामायण रचना में तत्पर हो जाओ। भगवान् ब्रह्मा ने वाल्मीकि को यह आदेश देकर ब्रह्मलोक गमन किया। कवित्व लाभ करके महर्षि वाल्मीकि भी पूर्ण सुखी हो गये।।८७।।

।।पञ्चविंश अध्याय समाप्त।।

❖❖❖

षड्विंशतितमोऽध्यायः

रामायण प्रशंसा

देव्युवाच

रामायणं महाकाव्यं कृतं वाल्मीकिना स्वयम्। तत्र रामचरित्रस्य व्यपदेशेन सर्व्वशः।
सर्व्वे धर्म्माः समुद्दिष्टा वर्णाश्रमविभागशः।।१।।
स्त्रीधर्म्मा राजधर्म्माश्च ब्रह्मधर्म्माश्च पुष्कलाः। वैश्यधर्म्माः शूद्रधर्म्मा धर्म्माश्च गृहिणां तथा।।२।।

नानादेवचरित्राणि शत्रुमित्रकथा अपि। इतिहासस्वरूपेण सर्व्वे धर्म्मा निरूपिताः॥३॥

एतत् पाद्यञ्च बोध्यञ्च स्मरणीयं शमिच्छता॥
यस्य गेहे समग्रं हि लिखितं वर्त्तते सखि।
न तत्र विपदः क्वापि नाधर्म्मस्तत्र सञ्चरेत्॥४॥५॥

देवी कहती हैं—मुनिप्रवर वाल्मीकि स्वयं रामायण महाकाव्य के रचनाकार थे। इस काव्य में रामचन्द्र के चरित्र वर्णन के रूप में वर्णाश्रम धर्म का भी सम्यक् वर्णन है। इसमें महर्षि वाल्मीकि ने स्त्री धर्म, राजधर्म, ब्रह्मधर्म का प्रभूत वर्णन किया है। इसमें वैश्यधर्म, शूद्रधर्म तथा गृहस्थधर्म आदि सभी धर्म, नाना देवचरित्र तथा शत्रुमित्रादि व्यवहार का निरूपण मिलता है। अपनी कुशल चाहने वाले मनुष्य इस ग्रन्थ का पाठ, स्मरण तथा अर्थज्ञान करें। यह सर्वतोभावेन करना चाहिये। हे सखियों! जिसके गृह में सम्पूर्ण रामायण लिखित रूप से रखी होती है, वहां किसी विपत्ति अथवा अधर्म का प्रकोप नहीं होता।।१-५।।

यस्य नास्ति गृहे सख्यौ काव्यं रामायणं शुभम्।
श्मशानभूमिस्तद्वाटी पितृदेवविवर्जिता॥६॥

सर्गं सर्गार्द्धमेकं वा श्लोकं श्लोकार्द्धमेव वा। अहोरात्रान्तरे यस्तु न स्मरेत् स नराधमः॥७॥
मानिषादेतिपद्यन्तु यो बालः पञ्चवर्षकः। अभ्यस्तं हृदये धत्ते स कविः स्यान्न संशयः॥८॥
अनावृष्टिर्महापीड़ा ग्रहपीड़ाप्रपीड़िताः। आदिकाण्डं पठेयुर्ये ते मुच्यन्ते ततो भयात्॥९॥

हे सखीगण! जहां कल्याणप्रद यह रामायण नहीं रखी जाती है, वहां पितर, देवता नहीं स्थित होते। वह गृह श्मशानवत् है। जो व्यक्ति समय के अभाव को कहकर समस्त दिन-रात में उक्त रामायण का एक सर्ग, किंवा आधा सर्ग अथवा मात्र एक श्लोक, किंवा आधा श्लोक भी स्मरण नहीं करता वह नितान्त अधम है। पांच वर्षीय बालक यदि "मा निषाद" वाला यही श्लोक कण्ठस्थ कर लेता है, तब वह वयस्क होकर निःसंदिग्ध रूपेण कवि हो जाता है। मानवगण अनावृष्टि, संकट, पीड़ा में, किंवा ग्रहपीड़ा पीड़ित होने पर यदि आदिकाण्ड का पाठ करते हैं, तब उनका यह सब जो भी भय है, वह नष्ट हो जाता है।।६-९।।

पुत्रजन्मविवाहादौ गुरुदर्शन एव च। पठेच्च शृणुयाच्चैव द्वितीयं काण्डमुत्तमम्॥१०॥
वने राजकुले वह्निजलपीड़ायुतो नरः। पठेदारण्यकं काण्डं शृणुयाद्वा स मङ्गली॥११॥
मित्रलाभे तथा नष्टद्रव्यस्य च गवेषणे। श्रुत्वा पठित्वा कैस्किन्ध्यं काण्डं तत्तत् फलं लभेत्॥१२॥
श्राद्धेषु देवकार्य्येषु पठेत् सुन्दरकाण्डकम्। शत्रोर्जये समुत्साहे जनवादे विगर्हिते।
लङ्काकाण्डं पठेत् किम्बा शृणुयात् स सुखी भवेत्॥१३॥
यः पठेत् शृणुयाद्वापि काण्डमभ्युदयोत्तरम्। आनन्दकार्य्ये यात्रायां स जयी परतोऽत्र च॥१४॥

पुत्र जन्म, विवाह, गुरुदर्शन दिवस पर मंगलार्थ अयोध्याकाण्ड का पाठ अथवा श्रवण करें। अरण्य में, राजद्वार में अग्निभय में, जलभय में किंवा रोगग्रस्त होने पर अरण्यकाण्ड पढ़े किंवा श्रवण करें। मित्रलाभार्थ किंवा नष्टद्रव्यप्राप्ति हेतु किष्किन्धाकाण्ड का पाठ अथवा श्रवण अभीष्टप्रद है। मानव देवकार्य, पितृश्राद्ध के समय देवता अथवा पितरों की प्रसन्नता हेतु सुन्दरकाण्ड का पाठ करें। उत्साहपूर्ण कार्य तथा लोकनिन्दा, शत्रु भय के समय

लंकाकाण्ड के पाठ अथवा श्रवण से मानव सुखी हो जाता है। जो आनन्दजनक कार्य अथवा यात्रा काल में उत्तराकण्ड का पाठ अथवा श्रवण करता है, वह इस लोक में तथा परलोक में जय प्राप्त करता है।।१०-१४।।

मोक्षार्थी लभते मोक्षं भक्त्यर्थी भक्तिमेव च। ज्ञानार्थी लभते ज्ञानं ब्रह्मतत्त्वोपलम्भकम्।।१५।।
यः पठेत् शृणुयाद्वापि काव्यं सर्व्वमतः क्रमात्। फलं तस्य प्रबक्ष्यामि शृणुतं विजये जये।।१६।।

स्त्रीराजपितृगोहन्ता ब्रह्महा हेमचोरकः।
सुरापो गुरुभार्य्यागो देवद्वेषकरस्तथा।
नानापापरतो वापि तत्क्षणादेव मुच्यते।
त्रैलोक्यपावनः सोऽपि देवानामपि दुर्लभः।।१७।।१८।।

महर्षि वाल्मीकि रचित सम्पूर्ण रामायण के पाठ किंवा श्रवण द्वारा मोक्षार्थी को मोक्ष, भक्तिप्रार्थी को भक्ति तथा ज्ञानार्थी को परम ज्ञान प्राप्ति होती है। हे सखियों! जो व्यक्ति शुद्ध काल में ब्रह्मचर्य पालन के साथ समाहित होकर माघमास में आदिकाण्ड, फाल्गुन में अयोध्याकाण्ड, चैत्रमास में अरण्यकाण्ड, वैशाख मास में किष्किंधाकाण्ड, ज्येष्ठ मास में सुन्दरकाण्ड, आषाढ़ में लंकाकाण्ड तथा उत्तर काण्ड को पढ़ता है, अर्थात् क्रमशः पूर्ण रामायण पाठ किंवा श्रवण सम्पन्न करता है, वह स्त्रीहत्या, राजहत्या, गोहत्या, पितृहत्या, ब्रह्महत्या, सुवर्ण चोरी, मद्यपीना, गुरुपत्निगमन, देवद्वेष तथा ऐसे नाना पापों से ग्रस्त होकर भी सर्वपाप रहित हो जाता है। उस व्यक्ति से त्रिभुवन परिपूत हो जाता है। देवगण उसकी प्रार्थना करते हैं।।१५-१८।।

यत्र रामायणस्यास्य प्रस्तावः खलु सम्भवेत्। तत्र सर्व्वेऽधितिष्ठन्ति तीर्थानि पितरः सुराः।।१९।।

रामायणस्य प्रस्तावे योऽन्यं प्रस्तावमाचरेत्।
सर्व्वपापाश्रयः स स्यात् मत्स्याशी सर्व्वभुग्यथा।।२०।।

रामायणस्य प्रस्तावे तत्क्षणादेव यस्य हि। न नश्यन्ति शोकदुःखपरीतापाः स वञ्चितः।।२१।।

आश्विने तु शारदीयमहापूजादिनेषु हि।
पठेद्यो रामचरितं चारु वाल्मीकिना कृतं।।
तस्य देवी मुक्तिदात्री ब्रह्मविष्ण्वादिवन्दिता।
प्रसीदति न सन्देहः सर्व्वाभीष्टफलप्रदा।।२२।।२३।।
श्रुत्वा पठित्वा काव्यन्तु वित्तिशाठ्यविवर्जितः।
दक्षिणां विपुलां दद्यात् आत्मदारसुतादिकाम्।।२४।।

इति वां कथितं सख्यौ कियद्रामायणोचितम्। रामायणगुणान्वक्तुं शक्तो नाहमशेषतः।
परमा दुर्लभा मुक्तिः शुश्रूषोर्यस्य किङ्करी।।२५।।

।।इति श्रीबृहद्धर्मपुराणे रामायणोत्कीर्त्तनं षड्विंशतितमोऽध्यायः।।

हे सखियों! जहां रामायण पाठ किया जाता है, वहां समस्त तीर्थ, पितृगण तथा देवता स्थिर रहते हैं। जो कोई

रामायण पाठ काल के प्रस्ताव काल में अन्य किसी विषय का प्रस्ताव रखता है, वह मानव सर्वप्राणी भोजन के पाप को भोगता है। जैसे एक मात्र भोजन के समय मत्स्य खाने वाला सर्वप्राणी भोजन का पापभागी होता है। यह भी वही बात है। रामायण पाठ के प्रस्ताव मात्र से जिनका समस्त शोक-दुःख-परिताप नहीं मिटता, वे परमेश्वर के यहां से भी वंचित हैं। आश्विन मास की शारदीय महापूजा काल में जो व्यक्ति वाल्मीकि रामायण में से मनोहर रामचरित का पाठ करता है उसके प्रति ब्रह्मादि देवगण से वन्दिता, सर्वअभीष्टप्रदा, मुक्तिदायिनी देवी भगवती परम प्रसन्न हो जाती हैं। रामायण के श्रवण तथा पाठान्त में कंजूसी किये बिना विपुल धन, स्त्री-पुत्रादि दक्षिणा प्रदान करे। हे सखियों! मैंने तुमसे यत्किंचित् रामायण महिमा का वर्णन किया है। सम्पूर्ण वर्णन दुःसाध्य है। जो मानव इस रामायण माहात्म्य का श्रवण करता है, उसके लिये परम दुर्लभ भक्ति देवी दासीरूप हो जाती हैं।।१९-२५।।

।।षड्विंश अध्याय समाप्त।।

सप्तविंशतितमोऽध्यायः

पुराणरचना में ऋषिगण में मतभेद

देव्युवाच

यदा रामायणं कृत्वा वाल्मीकिर्विरराम ह। तदा ब्रह्मा समागत्य वाल्मीकिमिदमब्रवीत्।।१।।
महर्षे ननु वाल्मीके कृतं रामायणं त्वया। नैवावशिष्टं किञ्चास्ति कर्त्तव्यं तव वर्त्तते।
अर्जिता परमा कीर्त्तिरक्षया धर्मरूपिणी।।२।।
किन्तु त्वन्मुखफुल्लाब्जे देवी गगनसम्भवा। देवितुं वाञ्छते नित्यं तत् कुरुष्व सदातनम्।।३।।
देव्या व्यसितं बुद्ध्वा महाभारतनामकम्। सनातनं महापुण्यमितिहासं पुरातनम्।
प्रकल्पितं मया सम्यक् तव श्लोकय तन्मुने।।४।।

देवी कहती हैं—जब महर्षि वाल्मीकि रामायण रचना करके विरत हो गये, तब ब्रह्मा ने वाल्मीकि से कहा—हे महर्षि वाल्मीकि! आपने रामायण रचना किया है, अतः अब आपका कोई कर्तव्य बाकी नहीं है। आपने धर्मरूपा अक्षय कीर्त्ति अर्जित किया है। तथापि गगन से उत्पन्ना देवी सरस्वती आपके मुखरूप प्रफुल्ल कमल में क्रीड़ा करने की अभिलाषिणी हैं। आप उनको चिरस्थायी करें। मैंने सरस्वती का उद्यम समझकर आपके लिये महाभारत नामक सनातन महापवित्र पुरातन इतिहास निश्चित करके रखा है। हे मुनिवर! आप उसे श्लोकबद्ध करें।।१-४।।

वाल्मीकिरुवाच

प्रभो ब्रह्मन् त्वया सर्व्वं ज्ञायते तत्तथापि ते। निवेदयाम्यात्मवृत्तिं यद्युक्तं तद्वदस्व मे।।५।।
कृतं रामायणं ब्रह्मन् व्यक्तं मोक्षस्य साधनम्। निःसन्देहो ह्यहं भूतः क्षोभमोहविवर्जितः।।६।।
किमर्थमपरं ग्रन्थं करिष्यामि वृथोद्यमः। सरस्वती चेत् सततं विहर्त्तुं देव वाञ्छते।।७।।

तदर्थं द्वापरे वेदव्यासनामा भविष्यति। सएव बहुचित्रार्थ महाभारतकृद्भवेत्॥८॥
पुराणोपपुराणानि स एव विरचिष्यति। नाल्पेन व्यवसायेन नृणां धर्ममतिर्भवेत्॥९॥
लोकानां धर्ममत्यर्थं कर्त्ता ग्रन्थान् बहून् स वै।
विष्णोः कलाऽसौ भविता वेदभागान् करिष्यति॥१०॥
अहं रामायणं कृत्वा कृतार्थोऽभवमीश्वर। व्यासायाहं वदिष्यामि काव्यवीजं सनातनम्॥११॥
येनासौ बहुधा ग्रन्थान् विधाय कुशलं भजेत्॥१२॥

वाल्मीकि कहते हैं—हे प्रभो! ब्रह्मन्! आप सर्वज्ञ हैं, तथापि मैं अपने विचार आपसे कहता हूं। मैंने रामायण रचना किया है, जो स्पष्टतः मोक्षसाधन है। मैं अब क्षोभ-मोह रहित तथा संसार शून्य हो गया। हे ब्रह्मन्! मैं किसके लिये उद्यम करूं? मेरे लिये अब सभी उद्यम व्यर्थ है। हे देव! यदि सरस्वती सतत् किसी के मुखकमल में विराजित होना चाहती हैं, तब उस हेतु द्वापर में वेदव्यास का जन्म होगा। वे विचित्रार्थयुक्त महाभारत की रचना करेंगे। वे पुराण-उपपुराण समूह की रचना करेंगे। अल्प चेष्टा से मनुष्य की धर्मबुद्धि नहीं होती। अतः वेदव्यास लोक में धर्मबुद्धि की स्थापना हेतु अनेक ग्रन्थ की रचना करेंगे। उनका जन्म विष्णु के अंश से होगा। वे वेदों का विभाग भी करेंगे। हे ईश्वर! मैं तो रामायण रचकर कृतार्थ हो गया। मैं उन व्यास को सनातन काव्यबीजोपदेश करूंगा। इसके प्रभाव से वे बहुतर ग्रन्थ रचकर मंगल प्राप्त करेंगे।।५-१२।।

देव्युवाच

इत्युक्तस्तेन वै ब्रह्मा हंसारुढश्चतुर्मुखः। एवमेवेति संमन्त्र्य ययौ लोकं निजं सखि॥१३॥
ततः काले गते दीर्घे द्वापरादौ हरेः कला। वेदव्यासो बभूवाथ सत्यवत्यां पराशरात्॥१४॥
चक्रे वेदतरोः शाखां दृष्ट्वा पुंसोऽल्पमेधसः। अथ ब्रह्मसभायां वै समायाता महर्षयः॥१५॥
कश्यपः कपिलोऽत्रिश्च भार्गवश्च पराशरः। व्यासश्च परमोदारः पुलस्तः पुलहः क्रतुः॥१६॥
याज्ञवल्क्यश्च विष्णुश्च हारीतश्च वृहस्पतिः। विश्वामित्रो वामदेवः शङ्खश्च लिखितस्तथा॥१७॥
जैगीषव्यो वशिष्ठश्च एकतश्च द्वितस्त्रितः। बालिखिल्याश्च ऋषयो गोतमो गालवो भृगुः॥१८॥
कात्यायनोऽङ्गिरा दक्षः प्रजानाथो मनुः स्वयम्। एते चान्ये च बहवो मुनयो मेरुपर्वते॥१९॥

देवी कहती हैं—हे सखी! वाल्मीकि के यह कहने पर भगवान् ब्रह्मा ने कहा "ऐसा ही हो"। वे हंसवाहनासीन होकर ब्रह्मलोक चले गये। तब दीर्घकाल के उपरान्त द्वापर के आने पर सरस्वती के गर्भ से पराशर के औरस से विष्णु अंश वेदव्यास का जन्म हुआ। उन्होंने लोगों की मेधा में कालदोष से अल्पता देखकर वेदस्वरूप महावृक्ष का शाखा विभाग किया। एक बार कश्यप, अत्रि, कपिल, भार्गव, पराशर, परमउदार वेदव्यास, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, याज्ञवल्क्य, विष्णु, हारीत, बृहस्पति, विश्वामित्र, वसिष्ठ, एकत, द्वित, त्रित, बालखिल्यादि, गौतम, गालव, भृगु, कात्यायन, अंगीरा, दक्ष तथा प्रजापति मनु तथा अन्य अनेक मुनिगण सुमेरु पर्वत पर ब्रह्मसभा में आये।।१३-१९।।

एतान् संपूज्य विधिवत् सुखासीनान् पितामहः। उवाच परमप्रीत्या चिरेणाधिगतं हृदा॥२०॥

पुरा रामायणं नाम भाव्यर्थं विहितं मया। तत्तु वाल्मीकिना काव्यं कृतं मदुपदेशतः॥२१॥
पञ्चविंशतिसाहस्त्री संहिता सप्तकाण्डिका। सर्गैः प्रबन्धबहुला सरस्वत्या अनुग्रहात्॥२२॥
सा नित्या पुण्यबहुला तदनन्तरमेव च। महाभारतनामान्यत् पुराणान्युभयानि च॥२३॥
अष्टादश तथान्यानि विहितानि तथा पुरा। किन्तु न श्लोकबद्धानि संक्षेपसंयुतानि च॥२४॥
ऋषीणां खलु सर्वेषां मध्ये कोऽत्र समर्थकः। स करोतु पुराणानि महाभारतमेव च॥२५॥
एतदर्थं पुरा प्रोक्तो वाल्मीकिर्मुनिसत्तमः। स तु रामायणं कृत्वा निरपेक्षोऽन्यतोऽभवत्॥२६॥

जब ये सभी सुखासीन हो गये, तब पितामह ब्रह्मा उनकी यथाविधि अभ्यर्थना करके अत्यन्त प्रेमपूर्वक चिरकाल से सोची गयी मनोगत कथा कहने लगे। ब्रह्मा ने कहा—मैंने पूर्व में भविष्यत हेतु रामायण की घटना को निश्चित किया था। तदनन्तर वाल्मीकि ने मेरे उपदेश तथा सरस्वती की कृपा से उसकी रचना काव्याकार की है। यह २५००० श्लोकात्मक संहिता है, जिसमें सात काण्ड तथा अनेक परिच्छेद हैं। यह नित्य तथा सुखप्रदा है। तदनन्तर महाभारत नामक एक अन्य ग्रन्थ १८ पुराण तथा १८ उपपुराण भी मैंने प्रस्तुत किया है, तथापि वह श्लोकबद्ध नहीं है तथा संक्षिप्त है। इन सब ऋषिगण में इस कार्य हेतु कौन समर्थ है, जो पुराण तथा महाभारत रच सके। तभी मैंने यह मुनिप्रवर वाल्मीकि से कहा तथापि वे रामायण की रचना के पश्चात् अन्य विषय से विरत हो गये।।२०-२६।।

देव्युवाच

इत्युक्तानां मुनीनाञ्च कोऽपि किञ्चिन्नचोचिवान्। प्रणम्य नारदस्तत्र ब्रह्माणमब्रवीदिदम्॥२७॥

देवी कहती हैं—ब्रह्मा द्वारा यह कहे जाने पर किसी ने कोई उत्तर ही नहीं दिया। तब ब्रह्मा को प्रणाम करके मुनि नारद कहने लगे।।२७।।

नारद उवाच

नारदोऽहं नमस्यामि शृणु यन्मे निवेदनम्। पुरा तुभ्यं यदेवाह वाल्मीकिराद्यकाव्यकृत्॥२८॥
तदर्थं द्वापरे वेदव्यासनामा भविष्यति। सएव बहुचित्रार्थमहाभारतकृद्भवेत्॥२९॥
पुराणोपपुराणादि सएव विरचिष्यति। नाल्पेन व्यवसायेन नृणां धर्ममतिर्भवेत्॥३०॥
लोकानां धर्ममत्यर्थं कर्त्ता ग्रन्थान् बहुन् स वै।
विष्णोः कलासौ भविता वेदभागान् करिष्यति॥३१॥
अहं रामायणं कृत्वा कृतार्थोऽभवमीश्वर। व्यासायाहं वदिष्यामि काव्यवीजं सनातनम्॥३२॥
येनासौ बहुधा ग्रन्थान् विधाय कुशलं भजेत्॥३३॥
तस्मादसौ व्यासएव भवदाज्ञां करिष्यति। तद्यन्ये च समर्थाः स्युस्ते वदन्तु च॥३४॥

नारद कहते हैं—मैं नारद आपको प्रणाम करता हूं। मेरा निवेदन सुनिये। आदि कवि वाल्मीकि ने पूर्वकाल में आपसे जो कहा था, वही मैं भी निवेदन करता हूं। वाल्मीकि का कथन था "द्वापर में वेदव्यास का जन्म होगा। वे ही विचित्रार्थ सम्पन्न महाभारत की रचना करेंगे। वे ही पुराणों तथा उपपुराणों की रचना भी करेंगे। अल्पप्रयत्न से

मनुष्य में धर्मबुद्धि नहीं होती। वेदव्यास लोक धर्म वृद्धि हेतु अनेक ग्रन्थ रचेंगे। वेदों का विभाग करेंगे। उनका जन्म विष्णु के अंश से होगा। मैंने रामायण रचना किया है। उसी से मैं कृतकृत्य हो गया। मैं व्यास को सनातन काव्यबीज का उपदेश प्रदान करूंगा। उसके प्रभाव से व्यास अनेक ग्रन्थ रचना करके मंगल प्राप्त करेंगे।" अतएव ये व्यास ही आपकी आज्ञा का पालन करेंगे। यदि अन्य कोई समर्थ है, तब वही यह करे।।२८-३४।।

मुनय ऊचुः

सर्वे वयं समर्था स्म पुराणकरणे प्रभो। यो यत् पुराणकर्त्ता स्यात् तस्मै तत्तन्नियुज्यताम्।
किमेक एव व्यासोऽयं भवदाज्ञावहो भवेत्।।३५।।

मुनिगण कहते हैं—प्रभो! हम सभी पुराण रचना में समर्थ हैं। जो जिस पुराण को रचित करने के लिये कहे, उसे उस पुराण में नियुक्त करिये। एक व्यास ही आपके आज्ञापालक (कैसे होंगे?) हैं।।३५।।

देव्युवाच

श्रुत्वेदं वचनं ब्रह्मा मुनीनां भावितात्मनाम्। हृदैव चिन्तयामास विरोधं तानुवाच ह।।३६।।

ब्रह्मोवाच

शृणुध्वं मुनयः सर्वे यदहं प्रब्रवीमि वः। श्रुतं वाल्मीकिवचनं नारदात् स यदाह माम्।।३७।।
समर्था अपि सर्वे वै पुराणकरणे द्विजाः। किन्तु गच्छत राजानं जनकं धर्मदर्शनम्।।३८।।
स वो विवादभङ्गाय मध्यस्थः प्रवदिष्यति। इत्युक्तास्ते मुनिगणा ययुः सर्वार्थदर्शिनः।।३९।।
वर्त्तते यत्र जनको राजा धर्मार्थदर्शिवान्।।४०।।

।।इति बृहद्धर्मपुराणे पूर्वखण्डे सप्तविंशतितमोऽध्यायः।।

देवी कहती हैं—ब्रह्मा ने आत्मध्यानतत्पर ऋषियों का यह वाक्य सुनकर मन ही मन इस विरोध के सम्बन्ध में चिन्तन करके ऋषियों से कहा—'हे मुनिगण! मैं जो कहता हूं उसे सुनें। हे द्विजगण! आप सभी पुराण रचना में समर्थ हैं। आप सब धर्मदर्शी जनक के यहां जायें। जनक मध्यस्थ होकर आपका विवाद समाप्त कर देंगे।' यह सुनकर सर्वार्थदर्शी वे मुनिगण धर्म के तात्पयार्थ को जानने वाले राजा जनक के यहां चले गये।।।३६-४०।।

।।सप्तविंश अध्याय समाप्त।।

❖❖❖

अष्टविंशतितमोऽध्यायः

ऋषियों की परीक्षा

देव्युवाच

तान् दृष्ट्वा जनको राजा मुनीन् सर्वान् समागतान्।
आसनात् सहसोत्थाय पूजयामास सादरम्।।१।।

देवी कहती हैं—राजा जनक ने इन सभी मुनिगण को आया देखकर तत्क्षण आसन से उठकर सादर उनका पूजन किया।।१।।

राजोवाच

किमर्थमागता यूयं सर्वे सूर्य्यसमप्रभाः। सर्वे सर्वार्थबोद्धारः सर्वे सर्वार्थदर्शिनः।।२।।
सर्वे सर्वार्थकुशला यूयं गुरुतरा नृणाम्। वयं गृहस्था युष्माकं कृपां वाञ्छामहे सदा।।३।।
सा कृपा चेत् सुफलिता सर्वार्थः सिद्ध्यते तदा। वैष्णवाः साधवः शान्ता लोकानुग्रहकातराः।।४।।
स्वयं कृतार्थाः सततं यूयं ये ते मयेक्षिताः। किमतोऽस्ति गृहस्थानां लाभोऽन्यः साधुसङ्गमात्।।५।।

राजा कहते हैं—आप सभी सूर्य के समान तेजस्वी हैं। सभी सर्व विषय ज्ञाता हैं। आप सब सर्वार्थदर्शी तथा सभी कार्य में कुशल हैं। आपका यहां शुभागमन किस कार्य से है? आप सभी इस लोक के परम गुरु हैं। मैं गृहस्थ आपकी कृपा की भिक्षा मांगता हूं। उस कृपा के फलवती होने पर सर्व कार्य सिद्ध होता है। आप सभी वैष्णव, साधु, शान्त, लोकानुग्रहकारी तथा कृतार्थ हैं। मैंने आप सबका दर्शन प्राप्त किया, गृहस्थ हेतु इससे बड़ा लाभ क्या है?।।२-५।।

मुनय ऊचुः

सत्यं भवन्तं राजर्षिं द्रष्टुकामा वयं सदा। त्वन्तु धर्मतनुः साक्षाद्वयं धर्माभिकाङ्क्षिणः।।६।।
प्रेषिता ब्रह्मणा सर्वे भवत्सन्निधिमागताः। षट्त्रिंशतः पुराणानां भारतस्य च भूपतेः।।७।।
भवत्वमीषां कः कर्त्ता तन्निदेशय पृच्छताम्। अयं पराशरोऽस्माकं वक्ता यद्वक्ति तन्मतम्।।८।।
वयं हि सर्वे श्रोतारो भवान्सम्यङ्निरूपकः।।९।।

मुनिगण कहते हैं—आप सत्यरूप राजर्षि हैं। आपको देखने की हमारी सर्वदा इच्छा रहती है। आप साक्षात् धर्मावतार हैं। हम सब धर्माभिकांक्षी हैं। हम ब्रह्मा द्वारा प्रेरित होकर आपके पास आये हैं। हे भूपति! हमारी जिज्ञासा है कि १८ पुराण तथा १८ उपपुराण इन ३६ पुराणों की तथा महाभारत की रचना हममें से कौन कर सकता है? वह निर्णय करें। ये पराशर, हम सबका पक्ष रखेंगे। यह जो कहेंगे वही हमारा मत है। हम सभी श्रोता हैं। आप निर्णय व्यक्त करें।।६-९।।

राजोवाच

शक्तिपुत्र महाभाग पराशर नमोऽस्तु ते। किमुक्तं ब्रह्मणा कौ वा विवादे संशयस्थितौ।।१०।।

राजा कहते हैं—शक्ति पुत्र पराशर को प्रणाम करता हूं। हे महाभाग! ब्रह्मा का क्या कथन है? इसमें कौन संशयग्रस्त है।।१०।।

पराशर उवाच

राजन् ब्रह्मसमीपस्थान् मुनीनाह समागतान्। वाल्मीकिर्भगवान् काव्यं चक्रे रामायणं परम्॥११॥
पुराणानां भारतस्य कः कर्त्ता भवतां भवेत्। तत्रादौ नारदो व्यासः कर्त्ता वै भारतादिनः॥१२॥
वयं विवदमाना वै समर्थास्तत्र कर्मणि॥१३॥

पराशर कहते हैं—राजन्! ब्रह्मा ने समवेत सभी मुनिगण से कहा कि वाल्मीकि ने परम काव्य रामायण की रचना किया। अब आप सब में महाभारत तथा पुराणों का रचयिता कौन होगा? तब वहां उपस्थित नारद ने कहा कि हममें से वेदव्यास भारतादि पुराणों की रचना करेंगे। तथापि अन्य भी इस कार्य में समर्थ हैं, तभी विवाद उठा।।११-१३।।

राजोवाच

ब्रह्मा च नारदश्चैव व्यासपक्षावुभौ मतौ। भवन्तोऽनुमताः केन पुराणादि करिष्यथ॥१४॥
कर्त्ता देवः स्वयं ब्रह्मा सर्वशास्त्रस्य सर्वथा। तेनैवानुमतं व्यासं भवन्तो नानुमन्यते॥१५॥
व्यासोऽपि च भवन्तश्च सर्वशास्त्रार्थदर्शिनः। महात्म्यं भगवन्नाम्नां वदन्तु श्रूयते मया॥१६॥

राजा कहते हैं—ब्रह्मा तथा नारद, दोनों ही व्यास के पक्ष में हैं, आप किसकी अनुमति से पुराणादि रचना करेंगे? देवदेव ब्रह्मा ही सर्वतोभावेन सर्वशास्त्र रचनाकार हैं। व्यास उनके अनुमत हैं। तथापि आप लोग व्यास के पक्ष में नहीं हैं। व्यास तथा आप सभी सर्वशास्त्र द्रष्टा हैं। आप सब भगवान् के नाम की महिमा कहिये। मैं सुनूंगा।।१४-१६।।

पराशर उवाच

किं वाच्यं भगवन्नाममाहात्म्यं मिथिलाधिप। यथाज्ञानं कियद्वच्मि तुभ्यं जिज्ञासवे सकृत्॥१७॥
कृष्णेति मङ्गलं नाम यस्य वाचि प्रवर्त्तते। भस्मीभवन्ति राजेन्द्र महापातककोटयः॥१८॥

पराशर कहते हैं—हे मिथिलापति! भगवान् के नाम की महिमा क्या कहूं! आप बारम्बार पूछ रहे हैं, अतः तनिक कहता हूं। हे राजन्! जिसके मुंह से 'कृष्ण' यह मंगलमय नाम उच्चरित हो जाता है, उसके करोड़ों महापातक नष्ट हो जाते हैं।।१७-१८।।

व्यास उवाच

नाम्नोऽस्य यावती शक्तिः पापनिर्हरणे हरेः।
तावत् कर्तुं न शक्तः स्यात् पातकं पातकी जनः॥१९॥

वेदव्यास कहते हैं—पापनाशक हरि नाम की शक्ति जहां तक है, पातकी लोग वहां तक पाप कर ही नहीं सकते।।१९।।

एवं श्रुत्वा महाराज उभयेषां सरस्वतीम्। पराशरादिं व्यासञ्च प्रोवाच जनको नृपः॥२०॥

राजोवाच

कर्त्ता महाभारतस्य वेदव्यासो हि नापरः। षट्त्रिंशतः पुराणानां व्यासश्चान्ये च ये द्विजाः॥२१॥

किन्तु गच्छत वाल्मीकिं महर्षिं चिरजीविनम्। स वो विधास्यते क्षेमं आदिकाव्यकृती कृती॥२२॥
श्रुतं मया यदाकाशे गच्छतः शुकपक्षिणः। शृणुध्वं तन्मुनिगणाः प्रोक्तं वाल्मीकिना पुरा॥२३॥
तदर्थं द्वापरे वेदव्यासनामा भविष्यति। (सएव बहुचित्रार्थमहाभारतकृद्भवेत्॥२४॥
पुराणोपपुराणादि सएव विरचिष्यति।) नाल्पेन व्यवसायेन नृणां धर्ममतिर्भवत्॥२५॥
लोकानां धर्ममत्यर्थं कर्त्ता ग्रन्थान् बहून् स वै।
विष्णोः कलासो भगवान् वेदभागान् करिष्यति॥२६॥
अहं रामायणं कृत्वा कृतार्थोऽभवमीश्वर। व्यासायहं वदिष्यामि काव्यवीजं सनातनम्॥२७॥
येनासौ बहुधा ग्रन्थान् विधाय कुशलं भजेत्। इदमेव ह्युपाख्यानं विधिं वाल्मीकिरब्रवीत्॥२८॥
मा चिन्तय महाराज लोके व्यासो भविष्यति। इत्येतद्विश्रुतं विप्राः खगस्य मुखतो द्विजाः॥२९॥
ततो गच्छत वै यूयं यत्र वल्मीकभूर्मुनिः। स्वद्वितीयः स्वयं ब्रह्मा काव्यसृष्टौ मुनीश्वरः॥३०॥
अस्यैवानुग्रहात् यूयं कवयोऽपि भविष्यथ। आस्तेऽसौ तमसातीरे जपन् रामायणं परम्॥३१॥

महाराज जनक ने दोनों पक्ष की भाषा सुनकर पराशर प्रभृति मुनिगण तथा व्यास से कहा "महाभारत की रचना वेदव्यास करेंगें। अन्य कोई नहीं करे। ३६ पुराण रचना व्यास तथा अन्य मुनिगण भी करें। जो भी हो, इस समय आप सब चिरंजीवी महर्षि वाल्मीकि के यहां जाईये। वे आदिकाव्यकर्त्ता तत्वज्ञ मुनि आपका कल्याण विधान करेंगे। एक पक्षी आकाश में उड़ता जा रहा था। उसने वाल्मीकि के कहे जो शब्द सुने, वह आप सब मुनिगण भी श्रवण करें। उसने सुना था "इसलिये द्वापर में वेदव्यास का जन्म होगा। वे ही बहुःविचित्र अर्थयुक्त महाभारत रचना करेंगे। वे ही पुराण-उपपुराण रचेंगे। मनुष्य में धर्मवृद्धि अल्प प्रयत्न से नहीं होती। लोक में धर्मसम्पादनार्थ वे अनेक ग्रन्थ रचना करेंगे। वे विष्णु अंश से जन्म लेंगे, उनके द्वारा वेद विभाग होगा। हे ईश्वर! मैं रामायण रचना से कृतकृत्य हूं। मैं वेदव्यास को सनातन काव्यबीज का उपदेश प्रदान करूंगा। उसके प्रभाव से वे अनेक ग्रंथ रचना करके मंगल प्राप्त करेंगे।" यह उपाख्यान वाल्मीकि द्वारा कहा गया है कि "चिन्ता न करें। जगत् में व्यास का जन्म होगा।" हे मुनिगण! मैंने पक्षी के मुख से यह प्रसंग सुना था। वे वाल्मीकि परम महाकाव्य रामायण का जप करते हुए तमसा नदी के तट पर स्थित हैं।।२०-३१।।

देव्युवाच

इत्युक्तास्ते मुनिगणाः जनकेन महात्मना। प्रययुः परमानन्दा यत्र चादिकविर्मुनिः॥३२॥

।।इति बृहद्धर्मपुराणे पूर्वखण्डे अष्टविंशतितमोऽध्यायः।।

देवी कहती हैं—महात्मा जनक के यह कहने पर मुनिगण वहां परमानन्द मग्न होकर गये, जहां आदिकवि वाल्मीकि स्थित थे।।३२।।

।।अष्टाविंश अध्याय समाप्त।।

ऊनत्रिंशत्तमोऽध्यायः

पुराणादि लेखक निर्णय, वाल्मीकि द्वारा व्यास को उपदेश

देव्युवाच

ते गत्वा तमसातीरं वाल्मीकिं तपसां निधिम्। ददृशुः शिष्यसहितं भूमिष्ठमिव भास्करम्॥१॥
प्रणेमुः परया भक्त्या ब्रह्माणमिव देवताः। महर्षिरपि तान् दृष्ट्वा मुनीन् शक्त्रिसुतादिकान्।
स्वागताद्यैः पूजयित्वा पप्रच्छ स्वासनस्थितान्॥२॥

देवी कहती हैं—वे ऋषिगण तमसातीर जाकर देखते हैं कि वहां शिष्यों सहित तपोनिधि वाल्मीकि विराजमान हैं, जो पृथिवी के सूर्य के समान तेजयुक्त हैं। जैसे देवगण, ब्रह्मा को प्रणाम करते हैं, उसी प्रकार मुनिगण ने वाल्मीकि को प्रणाम किया। महर्षि वाल्मीकि ने भी पराशर आदि ऋषिगण को देखकर स्वागत संभाषणादि से उन सब के प्रति सम्मान प्रदर्शित किया। तदनन्तर सबके आसनासीन हो जाने पर वाल्मीकि ने उनसे पूछा।।१-२।।

वाल्मीकिरुवाच

पराशरव्यासमुख्याः मुनयो यूयमागताः। किमर्थमिह संप्राप्ताः सर्वे सूर्य्यसमप्रभाः॥३॥

वाल्मीकि कहते हैं—हे पराशर, व्यास आदि सूर्य के समान तेजयुक्त मुनिगण! आपका यहां किस प्रयोजन से आगमन हुआ है?।।३।।

मुनय ऊचुः

पुरा ब्रह्मा मुनीन् सर्वानस्मान् पप्रच्छ सत्तमः। तत्राह नारदो व्यास एक एव महाकविः॥४॥
भारतञ्च पुराणानि करिष्यति महामतिः। तत्रास्माकं मतिर्जाता पुराणकरणे प्रभो॥५॥
अस्मान् विवदमानान् वै बुद्ध्वा ब्रह्मा चतुर्मुखः। विवादभञ्जकं भूपं जनकं प्रजगाद नः॥६॥
तेनादिष्टा वयं सर्वे (जनकस्य च सन्निधिम्। प्राप्ताः संपूजितास्तेन पृष्टा अपि मुनीश्वर॥७॥
तत्रास्माकं पुण्यतमः शक्त्रिपुत्रः पराशरः। वक्ताभूच्च वयं सर्वे) श्रोतारो जनको नृपः॥८॥
प्रत्युवाच विवादस्य भङ्गाय नो नु शृण्वताम्। ब्रह्मणा सर्वशास्त्राणां मूलकर्त्रा महात्मना॥९॥
नारदेनाप्यनुमतो व्यासो भारतकृद्भवेत्। अन्येषान्तु पुराणानां व्यासोऽन्ये च महर्षयः॥१०॥
अत्र मे नास्ति माध्यस्थ्यं पूर्वं तेन निरूपतिम्।
व्यासे पुराणकर्तृत्वं विवादोऽपि न वः क्वचित्॥११॥
यूयं गच्छत वै यत्र वाल्मीकिस्तदनुग्रहात्।
यः कविः स्यात् स एव स्यात् भारतादिकृती कृती॥१२॥
स जानीते काव्यवीजं तस्मात् गच्छत तत्र वै। अतस्ते निकटं प्राप्ता वयं सर्वे महर्षयः।
सर्वान् कविन्नः कुरु वै प्रभो आदिकवे कवे॥१३॥

मुनिगण कहते हैं—कुछ समय पूर्व भगवान् ब्रह्मा ने हम सबसे पूछा था कि हे प्रधान ऋषिगण! महाभारत तथा पुराण रचना आप सब में से कौन कर सकता है? तब नारद ने कहा कि "महामति महाकवि वेदव्यास ही पुराणादि की रचना करेंगे। हे प्रभो! तब पुराण रचना हेतु हमारी भी इच्छा है। चतुर्मुख ब्रह्मा ने हमें विवाद में पड़ा देखकर हम लोगों से कहा कि राजा जनक विवाद समाप्त करेंगे। तब हम जनक के पास गये। जनक ने हम सबका स्वागत करके जिज्ञासा भी किया। तब हमारी ओर से शक्तिपुत्र पुण्यात्मा पराशर वक्ता थे। हमारे विवाद को समाप्त करने हेतु हमारे समक्ष राजा जनक ने कहा—"सर्वशास्त्र के मूलकर्त्ता ब्रह्मा तथा नारद से अनुमति प्राप्त वेदव्यास ही महाभारत कर्त्ता होंगे।"

"व्यास तथा अन्य लोग पुराण रचना करें। लेकिन इस विषय में मेरी मध्यस्थता उचित नहीं है, क्योंकि महर्षि वाल्मीकि ने वेदव्यास को पुराणकर्त्ता कहा है। अतः इस विषय में कोई विवाद नहीं हो सकता। अतः आप लोग जहां वाल्मीकि स्थित हैं, वहां जाये। उनके अनुग्रह प्राप्त ही महाभारतादि के रचयिता होंगे। महर्षि वाल्मीकि ही काव्यबीज जानते हैं। वहीं आप लोग जायें।" तब हम सब महर्षि आपके पास आये। हे प्रभो! आदि कवि! मुनिवर! हम सब को आप कवि बना दीजिए"।।४-१३।।

वाल्मीकिरुवाच

एको नारायणो देवः सत्वरूपी सनातनः। तस्यैव वशगाः सर्वे कर्म कुर्वन्ति कर्मिणः।।१४।।
तस्मिन्नेव प्रलीयन्ते तस्मादेवोद्भवन्ति वै। तस्यैव हि नियोगेन ब्रह्माद्या अथ वै वयम्।।१५।।
सर्वे कुर्मः क्रियाः सर्वा यथोद्देशं यथातथम्। अहं रामायणं काव्यमकार्षं तन्नियोगतः।।१६।।
मद्द्वितीयः कविर्व्यासस्तेनैव हि विनिर्मितः। महाभारतकर्त्तासौ विधिसृष्टः पुरातनः।।१७।।
पुराणानामयं कर्त्ता द्विविधानां मुनीश्वराः। भवन्तोऽपि करिष्यन्ति पुराणान्युत कानिचित्।।१८।।
व्यासस्यैव प्रसादेन तानि नैवात्र संशयः। व्यासायाहं वदिष्यामि काव्यवीजं सनातनम्।।१९।।

वाल्मीकि कहते हैं—एक नारायण देव ही सत्वरूप तथा सनातन है। उनके वश में रहकर ही जीवगण कर्म करते हैं। जीवगण उनमें ही लीन हो जाते हैं, उनसे ही उद्भूत भी होते हैं। उनके ही आदेश से ब्रह्मा से लेकर हम सभी कर्म करते हैं। मैंने उनके नियोग से ही रामायण महाकाव्य रचा है। उन्होंने ही व्यास को द्वितीय कवि बनाया है। ये विधाता द्वारा महाभारत रचयिता रूप से सृष्ट हुए हैं। इनकी सृष्टि (जन्म) से पहले यह विषय रुका पड़ा था। हे मुनिवरगण! ये ही विविध पुराणों की रचना करेंगे। भगवान् की कृपा से इनके ही द्वारा यह रचना होगी। यह निःसंदिग्ध हैं। मैं सनातन काव्यबीज का उपदेश व्यास को प्रदान करूंगा।।१४-१९।।

तेनैव यूयं सर्वे वै भविष्यथ कृतार्थकाः। आदौ महाभारताख्यं वेदव्यासः करिष्यति।।२०।।
ततो विष्णुपुराणस्य कर्त्ता भावी पराशरः। एवं महापुराणानि व्यासएव करिष्यति।।२१।।
कर्त्ता चोपपुराणानां व्यासोऽप्यन्येऽपि केचन। वेदव्यासः श्लोककर्त्ता सर्वेषामेव सर्वतः।।२२।।
लेखकः कोऽपि वक्ता च कोऽपि ह्यर्थनिरूपकः।
श्लोककाः संहितानाञ्च परे मन्वादयो द्विजाः।।२३।।
मन्वत्रिविष्णुहारीतयाज्ञवल्क्योशनोऽङ्गिराः। यमापस्तम्बसम्बर्त्ताः कात्यायनवृहस्पती।।२४।।

पराशरव्यासशङ्खलिखिता दक्षगौतमौ। शातातपो वशिष्ठश्च धर्मशास्त्रप्रयोजकाः॥२५॥
एतेषां केऽपि वक्तारः केऽपि श्लोकार्थकारकाः।
अन्येऽपि मुनयः सर्वे सन्तु शास्त्रकृतः स्वयम्॥२६॥

वेदव्यास पहले महाभारत रचना करेंगे। तदनन्तर पराशर द्वारा विष्णुपुराण की रचना होगी। अन्य सभी महापुराण अकेले व्यास ही लिखेंगे। उपपुराणों की रचना व्यास तथा अन्य कोई-कोई करेंगे। जितने महापुराण तथा उपपुराण हैं, उन सबकी श्लोक रचना वेदव्यास द्वारा ही होगी। आप सबमें से कोई लेखक, कोई वक्ता, कोई अर्थ निरूपक होगा। मनु, अत्रि, विष्णु, हारीत, याज्ञवल्क्य, उशना, अंगीरा, यम, आपस्तम्ब, सम्वर्त्त, कात्यायन, बृहस्पति, पराशर, व्यास, शंख, लिखित, दक्ष, गौतम, शातातप तथा वसिष्ठ—ये लोग संहिता अथवा धर्मशास्त्र प्रवर्त्तक होंगे। इनमें से कोई-कोई श्लोकार्थ लेखक भी होगा। अन्य ऋषिगण भी शास्त्रकर्त्ता होंगे।।२०-२६।।

सर्वे स्वस्वमतेनैव ग्रन्थान् कुर्वन्तु पावनान्।
सर्वे यूयं निवर्त्तध्वं यात स्वस्वालयान् द्विजाः॥२७॥
काव्यवीजं वदिष्यामि व्यासायाहं महात्मने।
व्यासस्यानुग्रहादद्दूयं कवयोऽपि भविष्यथ॥२८॥

सभी अपने-अपने मतानुसार पवित्र ग्रंथ प्रस्तुत करें। हे द्विजगण! आप सब-लोग निवृत्त होकर अपने-अपने गृहगमन करिये। मैं महात्मा व्यास को काव्यबीज का उपदेश प्रदान करूंगा। व्यास की कृपा से आप सब भी कवि होंगे।।२७-२८।।

देव्युवाच

इत्युक्तास्ते मुनिगणाः सानन्दा एव हे सखि। प्रणम्यादिकविं श्रीलं वाल्मीकिं ते गतास्ततः॥२९॥
वाल्मीकस्याश्रमे व्यासो विरराम सखीद्वय।
वाल्मीकिः काव्यबीजानि व्यासायोवाच सादरम्॥३०॥

।।इति बृहद्धर्मपुराणे पूर्वखण्डे ऊनत्रिंशत्तमोऽध्यायः।।

देवी कहती हैं—हे सखी! वाल्मीकि का यह वचन सुनकर सभी मुंनिगण ने प्रसन्न चित्त होकर आदिकवि वाल्मीकि को प्रणाम किया तथा अपने-अपने स्थान चले गये। हे सखियों! वेदव्यास वहीं वाल्मीकि आश्रम में रुक गये। वाल्मीकि ने वेदव्यास को सनातन काव्यबीज का उपदेश दिया।।२९-३०।।

।।एकोनत्रिंश अध्याय समाप्त।।

❖❖❖

त्रिंशत्तमोऽध्यायः

वाल्मीकि द्वारा व्यास को भारत तत्वोपदेश

वाल्मीकिरुवाच

वेदव्यास किमादौ त्वं श्रोतुमिच्छसि सम्प्रति। तदहं भारतादीनां वीजं ते प्रवदामि वै॥१॥

वाल्मीकि कहते हैं—हे वेदव्यास! अभी आप क्या सुनना चाहते हैं, वह कहें। तदनन्तर मैं भारतादि का बीज प्रदान करूंगा?।।१।।

व्यास उवाच

कीदृशं भारतं नाम किं फलं तस्य तद्वद। केन वाहं करिष्यामि केन शक्तिर्भवेन्मम॥२॥

व्यास कहते हैं—भारत का रूप क्या है? उसका फल क्या है? मैं कैसे भारत रचना कर सकूंगा। वह शक्ति कैसे प्राप्त होगी?।।२।।

वाल्मीकिरुवाच

वेदः परिणतो भूत्वा महाभारततां गतः। विष्णोर्मुखात् समुद्भूता ब्राह्मण ये तपस्विनः॥३॥
बाहुतः क्षत्रिया जाताः पृथिवीजनपालकाः। ऊरुतो जज्ञिरे वैश्याः शूद्राः पादभवा मुने॥४॥
वर्णा अमी वै चत्वारस्तेषां कर्माण्यकल्पयत्। यजनं याजनं चैवाध्ययनाध्यापने तथा॥५॥
दानं प्रतिग्रहश्चैव षट्कर्मा ब्राह्मणः स्मृतः। विप्रपूजा प्रजारक्षा दानं युद्धं करग्रहः॥६॥
क्षत्रियः पञ्चकर्मा स्याद्वैश्यकर्म च कथ्यते। ब्राह्मणक्षत्रयोः सेवा धनसङ्ग्रह एव च॥७॥
वाणिज्यञ्च तथा दानं चतुष्कर्मा वणिग्जनः। ब्रह्मक्षत्रविशां सेवा शूद्रस्य कृषिकर्म्म च॥८॥
एतानि किल कर्माणि वर्णानां कथितानि ते। तत्र त्रयाणां वर्णानां वेदे योग्यत्वमिष्यते॥९॥
स्त्रीशूद्रद्विजवन्धूनां (त्रयी न श्रुतिगोचरा। स्त्रीशूद्रद्विजवन्धूनां) वेदार्थज्ञानहेतवे॥१०॥

वाल्मीकि कहते हैं—वेद ही महाभारत रूपेण परिणत होता है। तपस्वी जाति ब्राह्मण विष्णुमुख से उद्भूत है। पृथिवीपालक जाति क्षत्रिय उनके बाहु से उत्पन्न हैं। हे मुनिवर! उनके उरु से वैश्य तथा चरण से शूद्र की उत्पत्ति हुयी है। यही चातुर्वर्ण है। इन चारों वर्ण के कर्त्तव्य का निरूपण महाभारत रूप से परिणत वेद में है। यजन, याजन, अध्ययन, अध्यापन, दान तथा प्रतिग्रह ब्राह्मण के छः कर्म हैं। ब्राह्मण पूजा, प्रजारक्षा, दान, युद्ध तथा करग्रहण—ये क्षत्रिय के ५ कर्म हैं। अब वैश्यकर्म कहता हूं। ब्राह्मण-क्षत्रिय सेवा, धनसंचय, वाणिज्य, तथा दान—ये वैश्य के छः कर्म हैं। ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य सेवा तथा कृषिकार्य शूद्र के कर्म हैं। मैंने आपसे चारों वर्ण के कर्म कहे। प्रथम तीन वर्ण का वेदाधिकार हैं। स्त्री तथा शूद्र को वेदाधिकार नहीं हैं। तथापि ब्राह्मण-क्षत्रिय तथा वैश्य में से जो अपकृष्ट लोग हैं, उनको तथा स्त्री-शूद्र को वेदश्रवण का भी अधिकार नहीं है।।३-१०।।

भारतं कृतवान् पूर्व्वं देवो नारायणः स्वयम्। रामायणं तस्य वीजं परात्परतरं मतम्॥११॥
आदौ रामायणं देवो ब्रह्मणे दत्तवान् पुरा। दत्तञ्च ब्रह्मणा मह्यं श्लोकबद्धं मया कृतम्॥१२॥
विस्तारितञ्च रुचिरं वेदार्थसारसम्मतम्। पुनश्च भारतं कर्तुं ब्रह्मणा देशितोऽप्यहम्॥१३॥

नैव स्वीकृतवान् पूर्व्वं भारतं कर्तुमेव च। भारतस्य विधानाय त्वं नारायणनिर्मितः॥१४॥
रामायणाच्च विस्तीर्णं त्वं महाभारतं कुरु। रामायणपरीपाट्या त्वं महाभारतं कुरु॥१५॥
रामायणस्य काव्यस्य भारतस्य च वै मुने। विशेषात् शृणु मद्वाक्यान्नारायणनिरूपितम्॥१६॥

अतः स्त्री-शूद्र तथा द्विजबन्धु गण (जो द्विजों में अपकृष्ट हैं, उत्कृष्ट नहीं हैं) को भी वेदार्थ ज्ञान हो इसीलिये नारायण ने स्वयं महाभारत की रचना की है। इस भारत की परात्परतर बीज है रामायण देव नारायण ने सबसे पहले ब्रह्मा को रामायण प्रदान किया। ब्रह्मा ने मुझे प्रदान किया। मैंने उसे श्लोकबद्ध किया। मैंने उसका विस्तार वेदार्थ-सारसम्मत रूप से तथा मनोज्ञरूपेण किया। भारत रचना हेतु ब्रह्मा ने मुझे आदेश दिया, तथापि मैंने स्वीकार नहीं किया, आप रामायण से भी विस्तीर्ण महाभारत की रचना करें। महाभारत की रचना रामायण के परिपाटीक्रमेण ही की जाये। रामायण तथा महाभारत में जो विशेष पार्थक्य नारायण ने कहा है वह कहता हूं। सुनें।।११-१६।।

एक एव स्वयं देवः परमात्मा विभुः प्रभुः। कालाकाशस्वरूपोऽसौ सुखदुःखविवर्जितः॥१७॥
सोऽयं मानुषतां गत्वा स्वेच्छया कमलापतिः। चिक्रीड जगतीमध्ये रक्षोवधच्छलेन वै॥१८॥
धर्मांश्च दर्शयामास वर्णाश्रमविभागशः। अहं तद्वर्णयिष्यामि काव्यं रामायणाह्वयम्॥१९॥
परमात्मस्वरूपस्य सीतानाथस्य चेष्टितम्। वर्णितं चैकरूपस्य तच्छरीरविशेषवत्॥२०॥

आत्माराम परमात्मा एक ही हैं। वे ही प्रभुत्व सम्पन्न तथा सर्वेश्वर हैं। वे ही कालाकाल रूप तथा सुखदुःख रहित हैं। वे कमलापति परमात्मा ही मनुष्य रूप में अवतीर्ण होकर राक्षस वध की आड़ में पृथिवी पर क्रीड़ा करते हैं। उन्होंने वर्ण तथा आश्रम व्यवस्था के अनुसार यथाविभाग धर्मतत्व का प्रदर्शन किया है। उन पंरब्रह्म स्वरूप सीतानाथ का वृत्तान्त रामायण काव्य में है। रामायण उन प्रभु का अंग ही है।।१७-२०।।

सएव देवो भगवान् कृष्णः कमललोचनः। जीवद्वितीयश्चिक्रीड़ भूभारक्षयहेतवे॥२१॥
जीवात्मपरमात्मानौ नरनारायणावुभौ। अर्जुनश्च तथा कृष्णस्तावेव स्वेच्छया स्थितौ॥२२॥
पञ्चानां पाण्डुपुत्राणां तृतीयो योऽर्जुनो नरः। कृष्णश्च देवकीपुत्रो वासुदेवोऽखिलार्त्तिहा॥२३॥
नारायणो वासुदेवो नरश्चैवार्जुनाह्वयः। नरनारायणमयं तन्महाभारतं विदुः॥२४॥
एकं नारायणमयं कृतं रामायणं मया। रामायणे भारते च विशेषोऽयमुदाहृतः॥२५॥
गोपनीयो ह्ययं पन्था न वाच्यं यस्य कस्यचित्॥२६॥

वे परमात्मा देव ही कमललोचन भगवान् कृष्ण हैं। वे भूभारहरण हेतु जीवात्मा के साथ क्रीड़ा करते हैं। नर जीवात्मा है, नारायण परमात्मा हैं। स्वेच्छया अवतीर्ण नर ही अर्जुन हैं तथा नारायण ही कृष्ण हैं। पांच पाण्डवों में जो तृतीय हैं, वे अर्जुन ही हैं नर! देवकीनन्दन कृष्ण ही समस्त बाधाहारी वासुदेव हैं। वासुदेव ही नारायण हैं। अर्जुन ही नर हैं। जहां नर-नारायण का पूर्ण चरित्र अंकित हैं, उसे ही विद्वत्जन महाभारत कहते हैं। मैंने नारायण के एक काव्य रामायण की रचना की है। रामायण तथा महाभारत का मात्र यही अंतर है। यह तत्व अत्यन्त गोपनीय है। हर किसी से इसको प्रकाशित करना उचित नहीं है।।२१-२६।।

ईदृशं भारतं प्रोक्तं नरनारायणात्मकम्। भारतं परमं पुण्यं भारतं देवसम्मितम्।
भारतं भवने यस्य तस्य हस्तगतो जयः॥२७॥

भारतस्य समुद्रस्य मेरोर्नारायणस्य च। अप्रमेयाणि चत्वारि पुण्यतोयगुहागुणाः॥२८॥
भारतस्यान्तरीक्षस्य कालस्य च हरेरपि। अप्रमेयाणिं चत्वारि भावः सीमा गतिः क्रिया॥२९॥
भारतस्य च गङ्गाया शिवस्य च हरेरपि। अप्रमेयाणि चत्वारि नामपुण्यार्थशक्तयः॥३०॥
भारतं श्रूयते स्वर्गे भारतं श्रूयते क्षितौ। भारतं श्रूयते चैव पाताले परमादरैः॥३१॥
भारते विविधा अर्था भारते विविधा कथा। भारते षड्दर्शनानि भारते धर्मसञ्चयाः॥३२॥
न भारतमनाश्रित्य कथा काचित् प्रवर्त्तते। आहारमनपाश्रित्य शरीरस्येव धारणम्॥३३॥
यद्रात्रौ कुरुते पापं ब्राह्मणस्त्विन्द्रियैश्चरन्। महाभारतमाख्याय पूर्वां सन्ध्यां विमुञ्चति॥३४॥
यदह्ना कुरुते पापं ब्राह्मणस्त्विन्द्रियैश्चरन्। महाभारतमाख्याय सन्ध्यां मुञ्चति पश्चिमाम्॥३५॥
पूजयेद्भारतं गेहे स्थापयेत् भारतं गेहे। दद्याच्च भारतं सद्भ्यः पठेदपि॥३६॥
स एव परमश्रीमान् सार्थकं तस्य जन्म च। वृषोत्सर्गशतञ्चैव गयाश्राद्धशतं तथा॥३७॥
राजसूयाश्वमेधौ च यज्ञो विपुलदक्षिणौ। सदक्षिणौ भारतस्य श्रवणं पाठ एव च।
तुल्यान्येतानि कर्माणि मिथः प्रतिनिधीन्यपि॥३८॥
दक्षिणा भारतस्यापि आत्मा सर्वस्वमेव च। सर्वस्वं भारते दद्यात् सर्वस्वं पितृमातृषु॥३९॥
सर्व्वस्वं गुरुवे दद्यात् सर्व्वस्वं याचके क्रमात्। इत्येवं ते फलं प्रोक्तं भारतस्य समासतः॥४०॥

भारत ऐसा महाकाव्य है जिस के गृह में महाभारत है, जय उसके हाथों में है। भारत, समुद्र, सुमेरु तथा नारायण ये चारों अप्रमेय हैं। भारत का पुण्य अपरिमेय है। समुद्र का जल अपरिमेय है। सुमेरु की गुहा अपरिमेय है तथा विष्णु के गुण अपरिमेय हैं। भारत, गंगा, शिव तथा हरि, इन प्रत्येक नाम में पुण्यजनक शक्ति, अर्थसाधकता तथा सामर्थ्य रहता है। ये चारों अप्रमेय हैं। स्वर्ग में भारत (महाभारत) को सुनते हैं, पृथिवी तथा पाताल में भी इसे सुनते हैं। भारत का अत्यन्त आदर सर्वत्र है। भारत में अनेक अर्थ, अनेक कथा, षड्दर्शन तथा धर्मसमूह स्थित हैं। जैसे आहार के बिना जीवन नहीं रहता, वैसे ही भारत का आश्रय लिये बिना किसी कथा की प्रवृत्ति ही नहीं होती। ब्राह्मण इन्द्रियों के जाल में विचरण करता रात्रि में जो पाप संचय करता है, वह प्रातः महाभारत का नाम लेते ही निर्मूल हो जाता है। ब्राह्मण इन्द्रियों द्वारा मोहग्रस्त हो दिन में जो पाप करता है, सायंकाल महाभारत का नाम लेते ही उस पाप से मुक्त हो जाता है। गृह में महाभारत की पूजा करें। गृह में उसे स्थापित करें, विद्वानों को यह ग्रन्थ दान भी करें। भारत श्रवण करें तथा पाठ भी करे। जो ऐसा करेगा, वही उत्तम है। वही श्रीमान् तथा सार्थक जन्मवाला है। सौ वृषोत्सर्ग, १०० गया श्राद्ध, राजसूययज्ञ, सदक्षिणा वाला यज्ञ—इनका जो फल है, वह भारत के श्रवण तथा पाठ से प्राप्त हो जाता है। ये सभी कर्म परस्परतः तुल्य हैं। भारत के (अनुष्ठान में) लिये दक्षिणा ही आत्मा तथा उसका सर्वस्व है। भारत के पाठ अथवा श्रवण के पश्चात् दक्षिणा देनी चाहिये। पिता-माता के श्राद्ध में सर्वस्व व्यय करें। सर्वस्व गुरु तथा याचक को प्रदान करे। इस प्रकार भारत का फल संक्षेप में कह दिया।।२७-४०।।

कवचं कथ्यते विप्र भारतस्य शृणुष्व तत्। ॐ नमो भगवते तुभ्यं वासुदेवाय धीमहि।
नराय परमेशाय जीवाय परमात्मने॥४१॥
आदिपर्व्व पातु मूलवीजं पातु द्वितीयकम्। ऋषिर्नारायणः पातु शक्तीरामायणं तथा॥४२॥

विराटपर्व्व छन्दश्च देवतार्य्यास्तवोऽवतु। प्रमाणं भगवद्गीता शक्तिमान् पातु भीष्मकः॥४३॥
प्रतिपाद्यं द्रोणपर्व्व कार्ण पर्व्वार्थकोऽवतु। निर्णयः शल्यपर्व्व स्यात् कर्त्ता पातु गदादिकम्॥४४॥
प्रयोजनं शान्तिपर्व्व स्वरूपमाश्वमेधिकम्। लक्षणञ्चावगम्यञ्च लयश्चान्यान्यवन्तु माम्॥४५॥
अव्यादाचरणीयञ्च सर्वाश्चर्य्यमथोत्तरम्। एतद्वै कवचं धृत्वा कुरु भारतमुत्तमम्॥४६॥
भारते फलसिद्धिश्च कवचादप्यतो भवेत्। पठ रामायणं व्यास काव्यवीजं सनातनम्॥४७॥

अब इस ग्रन्थ का कवच कहता हूं। हे विप्र! इसका श्रवण करो। प्रणववाच्य परमेश्वर परमात्मा भगवान् वासुदेव का तथा नर रूप जीव का ध्यान करता हूं। आपको प्रणाम। मूल बीज आदि पर्व रक्षा करें। बीज सभापर्व रूप मेरी रक्षा करें। इसके ऋषि नारायण हैं, रक्षा करें। शक्ति रामायण है, रक्षा करें। विराटपर्व छन्द है और आर्यास्तव देवता हैं, ये भी रक्षा करें। प्रमाण भगवद् गीता हैं, शक्तिमान भीष्मपर्व रक्षा करें। द्रोणपर्व प्रतिपाद्य है। कर्णपर्व अर्थ है। ये भी रक्षा करें। शल्यपर्व सिद्धान्त है। यह शल्यपर्व तथा कर्त्ता की गदादि रक्षा करें। प्रयोजन शान्तिपर्व है।

स्वरूप अश्वमेध पर्व है। ज्ञेय लक्षण तथा लयरूप अन्य सभी पर्व मेरी रक्षा करें। आचरणीय अद्‌भुद् शेष पर्व मेरी रक्षा करें। यह कवच धारण करके उत्तम भारत की रचना करें। इस कवच से भी भारत के समान फल मिलता है। हे व्यास! सनातन कव्यबीज रामायण का पाठ करिये।।४१-४७।।

पुराणानाञ्च सर्व्वेषां क्रम एवंविधो मतः। अष्टादश पुराणानि तत्त्वान्यष्टादशैव तु॥४८॥
एवञ्चोपपुराणानि तत्त्वान्यष्टादशैव तु। महापुराणेषु मुने श्रीभागवतमन्ततः॥४९॥
बृहद्धर्मपुराणञ्च पुराणेष्वितरेषु च। मुने आचरणीयं स्यात् मूलादीनीतराणि च॥५०॥
कुरु सर्व्वपुराणानि महाभारतमेव च। तेषु तेषु पुराणेषु महाभारत एव च।
यत्र रामचरित्रं स्यात् तदहं तत्र शक्तिमान्॥५१॥
ब्रह्मणो वचनं व्यास प्रतिपाल्यं करोमि वै। अन्येषान्तु मुनीनां वै ग्रन्थेषु संग्रही कृती॥५२॥

सभी पुराणों का यही क्रम है। १८ पुराण में १८ तत्व हैं। १८ उपपुराण में भी १८ तत्व हैं। हे मुनिवर! जैसे महापुराणों श्रीमद्‌भागवत् सर्वोत्तम है, उसी प्रकार उपपुराणों में बृहद्धर्मपुराण उत्तम है। हे मुनिवर! ये दो पुराण ही पुराण प्रस्थान का सार है। अन्य बाकी पुराण जड़ आदि विभिन्न अंग हैं। आप सभी पुराण तथा महाभारत की रचना करें।

पुराण तथा महाभारत में जहां रामचरित होगा, वहां मेरी कवित्व शक्ति रहेगी। हे व्यास! इस प्रकार मैं ब्रह्मा की बात का पालन करूंगा। अन्य मुनियों में जिन्होंने ग्रन्थ के भाव का संकलन किया है, वे कृती हैं।।४८-५२।।

देव्युवाच

इत्याकर्ण्य तदा व्यासः प्रोक्तं वाल्मीकिनाद्भुतम्।
गुरुणा चादिकविना वेदव्यासो नमाम तम्॥५३॥

देवीं कहती हैं—व्यासदेव ने तब आदिकवि गुरु वाल्मीकि की अद्‌भुद् कथा सुनकर उनको प्रणाम किया। तदनन्तर व्यास कहने लगे।।५३।।

व्यास उवाच

महर्षेऽहं कृतार्थोऽस्मि कविरस्मि (महामतिः। रामायणं पाठितं मे प्रसन्नोऽस्मि) कृतस्त्वया॥५४॥

करिष्यामि पुराणानि महाभारतमेव च। धर्म्मानहं वदिष्यामि त्वत्प्रसादान्महामुने।।५५।।

व्यास कहते हैं—हे महर्षि! मैं रामायण को पढ़ते ही मैं महामति कवि तथा कृतकृत्य हो गया। आपने मेरे अन्तःकरण को प्रसन्न कर दिया। हे महामुने! आपकी कृपा से मैं भारत तथा पुराण रचना करके उसमें धर्म वर्णन करूंगा।।५४-५५।।

देव्युवाच

यदा रामायणं व्यासः पठित्वा सुव्यवस्थितः। तदैव भारतादीनां मूर्त्तीः सम्यग्ददर्श ह।।५६।।
षट्त्रिंशतः पुराणानां भारतस्य च हे सखि। संहितानाञ्च सर्वासां मूर्त्तीः संददृशे मुनिः।।५७।।
मूर्त्तिमन्ति पुराणानि भारतादीनि सर्वशः। प्रणम्य ततौ मुनिश्रेष्ठौ तत्रैवान्तर्हितानि वै।।५८।।
मुनिभिः सहितो व्यासो ययौ बदरिकाश्रमम्। इत्येतद्वां समाख्यातं सखै यत् पृष्टमेव हि।
आगच्छत गृहं यामो यत्र देवो महेश्वरः।।५९।।

देवी कहती हैं—जब व्यास ने रामायण का अध्ययन किया तथा सुव्यवस्थित हो गये, तभी वे भारत आदि की मूर्त्ति सम्यक्तः देख सके। हे सखियों! तब मुनि ने ३६ पुराण, महाभारत तथा सभी संहिताओं को सम्यक्तः देखा तब भारत पुराण मूर्त्तिमान होकर व्यास तथा वाल्मीकि को प्रणाम करके अन्तर्हित हो गया। व्यासदेव भी मुनियों के साथ बदरिकाश्रम चले गये। हे सखियों! तुमने जो पूछा था वह हमने कह दिया। अब महेश्वर गृह में हैं, हम भी वहीं चलें।।५६-५९।।

व्यास उवाच

जाबाले गिरिजा सती सखियुगं सानन्दफुल्लाननम्
स्वाख्यानश्रवणोल्लसत्तरमनःप्रव्यक्तरोमोद्गमम्।
गङ्गाया निकटस्थलादिविवरं कैलासमप्रापयत्
स्वार्द्धं स्वेन मुने विलोकितमिदं साक्षात्परं किं वदे।।६०।।

।।इति श्रीबृहद्धर्मपुराणे व्यासजाबालिसम्बादे जयाविजयासम्बादः पूर्वखण्डे त्रिंशत्तमोऽध्यायः।।

।।पूर्व्वखण्डः समाप्तः।।

व्यास कहते हैं—हे जाबालि! पार्वती की कथा सुनकर जया-विजया प्रफुल्लित हो गयीं। मुख प्रफुल्ल तथा देह रोमांचित हो गयी। देवी भी उन सबको गंगा के निकटवर्त्ती स्थान से गिरिवर कैलाश ले गयीं। यह सब मैंने साक्षात् देखा है। अधिक क्या कहूं।।६०।।

।।त्रिंश अध्याय समाप्त।।

।।पूर्वखण्ड समाप्त।।